RNI No.: RAJBIL/2013/54153

ISSN : 2322-0074

# अलख दृष्टि

## ALAKH DRISHTI

(भाषा, दर्शन, साहित्य, संस्कृति एवं मानविकी की संवाहिका त्रैमासिक शोध पत्रिका)

वर्ष-7 • अंक-01 • त्रैमासिक • जनवरी-मार्च, 2019

*A Peer Reviewed Research Quarterly*

Scanned by CamScanner

| सं. | विषय | लेखक | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|---|
| . | प्राकृत भाषा के संरक्षण में संस्कृत साहित्य का योगदान | डॉ. सुदर्शन मिश्र | 6-10 |
| . | कलश विवेचन | हरिशंकर पाण्डेय | 11-16 |
| . | श्रेष्ठ ज्ञान और उसका प्रतिपादनः ज्ञानसार के संदर्भ में | मुनि लाभेश विजय | 17-19 |
| 4. | कालिदास के काव्यों में प्रेम एवं सौन्दर्य | डॉ. समणी संगीत प्रज्ञा | 20-24 |
| 6. | प्राचीन प्राकृत ग्रंथों में कंदमूल विमर्श | डॉ. दिलीप धींग | 25-31 |
| 7. | सामाजिक समरसता के नवनिर्माण में मूल्य शिक्षा की भूमिका | जयप्रकाश सिंह<br>डॉ. विष्णु कुमार | 32-35 |
| 08. | सुमित्रानन्दन पंत एवं महादेवी वर्मा के काव्य में वेदना एवं विद्रोह | डॉ. श्रवण राम | 36-40 |
| 09. | Environmental Ethics and Sustainable Development | Dr. Rashmi Dhar | 41-53 |
| 10. | Backward Children and Remedial Education | Ms. Ranjana Upadhyay | 54-58 |


Scanned by CamScanner

# सामाजिक समरसता के नवनिर्माण में मूल्य शिक्षा की भूमिका

जयप्रकाश सिंह, डॉ. विष्णु कुमार

**सारांश**

जिस दौर में हम लोग जी रहे हैं उस दौर का सबसे बड़ा सच है कि मानवता, नैतिकता और सहिष्णुता का तार-तार होना दिख रहा है। निरन्तर मानवीय मूल्यों का ह्रास होना, दैनिक समाचार पत्र, टी.वी., समाचार या अन्य सोशल मीडिया देखने और सुनने के बाद असल में समाज का एक ऐसा चेहरा हमारी आंखों के सामने मुखरित होता है जो हमें लम्बे समय तक झकझोरते रहेगी। यदि इस तरफ हमने ध्यान नहीं दिया तो आने वाली पीढ़ी हमें माफ नहीं करेगी। इस विषय पर अपनी सोच एवं बहुत सारे क्षोभ, पीड़ा, चिन्ता और सवाल को यूं ही अनसुना छोड़ देना वस्तुतः संवेदनहीन समाज की पहचान होगी।

**प्रस्तावना**

भारत में विभिन्न जाति, धर्म, सम्प्रदाय के लोग निवास करते हैं। सभी लोग अपने सामाजिक विविधता, स्वभाव, क्षमता, वैचारिक स्तर, भाषा, खान-पान, देवी-देवता, पंथ-सम्प्रदाय, जाति व्यवस्था आदि विधिताओं में जी रहे है। प्रत्येक समाज अपने जाति भेदभाव के कारण सामाजिक समस्याएं और विषमताओं को जन्म देती हैं जिससे आपसी संघर्ष बढ़ता है। प्राचीन भारत से ही सामाजिक व्यवस्था (वर्ण व्यवस्था) कर्म पर आधारित थी। धीरे-धीरे यह कर्म व्यवस्था से वर्ग व्यवस्था और वर्ग व्यवस्था से वंशानुगत होते चले गये। मध्य काल तक पारिवारिक व्यवस्था तक सीमित होकर जाति एवं वर्ग की पहचान बन गये। इस समय समाज की व्यवस्था का निर्धारण कर्म एवं क्षमता के आधार पर न होकर जन्म के आधार पर हो गई थी। साथ-ही-साथ ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत के स्वाभिमान तथा सामाजिक सौन्दर्य पर प्रहार (फूट डालो और राज करो की नीति) से भारतीय अपनी वैभवपूर्ण समरस जीवन पद्धति से दूर उदारसीनता की ओर चले गये। वर्ण-व्यवस्था ने समाज में आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, अन्याय का वातावरण बना दिया जिससे सामाजिक विषमतायें, वर्ण-जाति व्यवस्था ने देश में सामाजिक विषमता

Scanned by CamScanner

पैदा कर दी। आजादी के इतने वर्षों बाद भी सामाजिक व्यवस्था में समता का जो स्थान होना चाहिए था वह नहीं हो पाया है। इसका मूल कारण कुछ राजनीतिक स्तर पर नेताओं द्वारा धर्म एवं जाति को राजनीतिक हथियार के रूप में उपयोग कर अपनी रोटियां सेंकना था।

**वर्तमान समय में समाज के विभिन्न पहलुओं की यथास्थिति**

**पारिवारिक स्थिति**- आधुनिक युग की जटिलताओं ने परिवार में अनेक परेशानियों को जन्म देकर दोषपूर्ण परिस्थितियों का सृजन किया है। जैसे-एकल परिवार, सम्बन्ध-विच्छेद, खण्डित परिवार की संकल्पना आदि। एकल हो या संयुक्त दोनों ही स्थितियों में पारिवारिक माहौल के आपसी सम्बन्धों में तू-तू-मैं-मैं और आपसी तनाव की स्थिति देखने को मिलती है। परिवार के सदस्यों में आपसी समभाव कम होता गया है। जबकि जहां परिवार के सभी सदस्यों में आपसी सम्बन्ध एवं अन्य आगन्तुक अतिथियों के साथ होने वाले व्यवहार को देखकर बच्चों में प्रेम, करुणा, सहयोग एवं कर्त्तव्य सीखने का मौका होना चाहिए था। इसी माहौल में समरसता की नींव पड़नी चाहिए थी।

**सामाजिक स्थिति** - प्रायः प्रत्येक समाज के रीति-रिवाज, संस्कृति के साथ-साथ ही पश्चिमीकरण की संस्कृति ने सामाजिक मूल्यों को काफी हद तक प्रभावित किया है जिससे समुदायों में जातियां, जनजातियां में संघर्ष एवं तनाव की स्थिति उत्पन्न हुई है। जैसे-अनुसूचित जातियों को मन्दिरों में जाने से रोके जाने का, मन्दिरों में महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध, छोटी जातियों को सामाजिक पनघटों से रोक-टोक। जबकि यहां पर जरूरी है कि समाज में समता के भाव को फैलाया जाये। एक मानव की तरह ही वह भी दूसरे मानव के साथ व्यवहार करें। उसके साथ भी मनुष्यता का व्यवहार किये जाने की जरूरत है। सामाजिक व्यवहार, सहयोग, सहायता सम्बन्धी मूल्य विकसित किये जाने चाहिए जिससे संघर्ष की जगह प्रेम, भाईचारा बढ़े।

**जातिगत स्थिति** - इतिहास गवाह है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने वर्षों बाद भी जातिगत समस्या सुलझने की बजाय और उलझती जा रही है। जैसे- छुआछूत, हीन-भावना आदि। उच्च जाति के लोग अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों को हेय दृष्टि से देखना, छुआ हुआ नहीं लेना, शोषणात्मक प्रवृत्ति का व्यवहार करते हैं। जबकि ऐसा व्यावहारिक नहीं होना चाहिए। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने ठीक ही लिखा है कि "हिन्दुओं का आचरण हैरानी भरा है। जब तक कोई व्यक्ति हिन्दू समाज का अंग है, उसके साथ छूआछूत का बर्बरतापूर्ण व्यवहार करता है। यदि वह हिन्दू धर्म छोड़कर मुस्लिम या ईसाई हो जाता है तो समता का व्यवहार किया जाता है। जबकि हम सब भारतीय परस्पर भाई-बहिन हैं ऐसी भावना होनी चाहिए।"

**धार्मिक स्थिति** - समाज में विभिन्न धर्मों के लोग अपने-अपने धर्म के आदर्श मूल्यों से जुड़े होते हैं। अपने धर्म गुरुओं को अच्छा मानते हैं। अन्य धर्म गुरुओं को नगण्य समझते हैं। इतना ही नहीं एक-दूसरे धर्म के प्रति हीनता की भावना व्यक्त करने से द्वेष, द्वन्द्व एवं दंगे का रूप भी ले सकती हैं। जैसे-आज राम मन्दिर के नाम पर हिन्दू धर्म की कई धर्म गुरुओं द्वारा अपने-अपने विचारों से राम मन्दिर के नाम पर धार्मिक रोटियां सेंकते हुए आये दिन देख सकते हैं। जबकि यहां धर्मनिरपेक्ष मूल्यों का विकास करना चाहिए था जैसे- सभी धर्मों का आदर करना, धार्मिक कट्टरता को हतोत्साहित करना, वैज्ञानिक मूल्यों को अपनाना आदि।

**आर्थिक स्थिति** - मानव अपनी जीविका के पालन के लिए अर्थ का अर्जन करता है। समस्या तो तब होती है जब अर्जन आवश्यकता से अधिक करने की प्रवृत्ति बढ़े। व्यक्ति लाख कमाने के लिए किसी भी सीमा तक जाने को तैयार हो जाता है। इस तरह उच्च एवं निम्न आर्थिक वर्ग का निर्माण होता है। अमीर गरीब के बीच में खाई बढ़ती जाती है। इससे आर्थिक विषमता बढ़ती जाती है। जबकि आर्थिक मूल्यों का विकास किया जा सकता है जैसे- गलत तरीके से पैसा नहीं कमाना, कर्मचारियों को कार्य का उचित मूल्य देना, कर्मचारी के चयन में भेदभाव नहीं रखना, सरकार द्वारा दिये गये आरक्षण का प्रावधान लागू किया जाना जिससे समाज में समता एवं भाईचारे का विकास हो सके।



Scanned by CamScanner

**राजनीतिक स्थिति** - सत्ता पक्ष हो या विपक्ष के नेता, केवल वोट की राजनीति कर रहे हैं। एक-दूसरे दल की बुराईयों के साथ-साथ दोषारोपण करने में लगे हैं। आरक्षण जैसे मुद्दे को ले लीजिए, कोई भी पार्टी सीधे तौर पर उस वर्ग की भलाई नहीं सोचती है बल्कि उस ज्वलन्त मुद्दे पर अपनी राजनीतिक फायदा कैसे हो सकता है ताक में लगे रहते हैं। जैसे- आज वोट बैंक बनाने के लिए हर पार्टी किसानों, दलितों का हमदर्द अपने आपको बताने में तुली हुई है। जबकि राजनीतिक माहौल में मूल्य आधारित बातों को विकसित किया जाना चाहिए। जैसे- नेता अपनी कथनी और करनी एक समान करें, केवल झूठा वादा न करें, सभी जाति, वर्ग एवं धर्म के व्यक्तियों से समभाव रखें आदि।

उपर्युक्त विवरण से वर्तमान समय में समाज के विभिन्न पहलुओं की यथास्थिति स्पष्ट होती है और समाज का जो चेहरा हमारी आंखों के सामने है वह है 'समरसताविहीन समाज'।

## सामाजिक समरसता का अर्थ

समरसता का अर्थ मात्र समानता नहीं सभी को अपना मानकर किया जाने वाला व्यवहार है। उसी प्रकार संक्षेप में सामाजिक समरसता का अर्थ सबका समान और सबसे आत्मीयतापूर्ण व्यवहार अर्थात् व्यापक अर्थों में जातिगत भेद-भाव एवं अस्पष्टता का उन्मूलन कर परस्पर प्रेम एवं सौहार्द्र समाज के सभी वर्गों एवं वर्ण के मध्य एकता स्थापित करने से है। इसमें आध्यात्मिकता भी है और नैतिकता भी है। समरसतापूर्ण व्यवहार से स्वतंत्र, समता और बन्धुत्व (भ्रातृत्व) के माध्यम से सामाजिक समरसता तक पहुंच सकते हैं।

## वर्तमान समय में सामाजिक समरसता की आवश्यकता

इस समय समाज में इसकी नितान्त आवश्यकता प्रतीत होती है-

1. स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए।
2. आपसी सम्बन्धों में प्रेम भाई-चारा बढ़ाने हेतु।
3. सामाजिक एकता के निर्माण के लिए।
4. शाश्वत मूल्यों की पुनर्स्थापना हेतु।
5. धार्मिक सहिष्णुता हेतु।
6. जातिगत द्वन्द्व, छूआछूत कम करने हेतु।
7. संयुक्त संस्कृति की विरासत को विकसित करने हेतु।
8. सफल राष्ट्र के निर्माण हेतु।

## मूल्य शिक्षा की भूमिका

शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन की मूलभूत आवश्यकता एवं साधन के रूप में स्वीकार किया जाता है। डॉ. राधाकृष्णन् ने कहा था- "शिक्षा परिवर्तन का साधन है जो कार्य साधारणतः समाज में परिवार, धर्म, सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं द्वारा किया जाता है वहीं आज शिक्षा संस्थाओं द्वारा किया जाता है।" स्वतंत्र भारत में प्रत्येक सरकार ने उत्तरोत्तर बदलती परिस्थितियों के अनुसार शिक्षा नीति और उससे जुड़ी हुई अपनी सोच को भी लचीला बनाया है। 'मूल्य शिक्षा' का अभिप्राय उन सभी प्रक्रियाओं से है जो किसी व्यक्ति में ऐसे सकारात्मक गुणों, अभिरूचियों तथा विशेषताओं का विकास करते हैं जिससे समाज में सही ढंग से स्थापित होने की क्षमता विकसित हो जाती है। विश्वविद्यालय आयोग की प्रमुख बातें दुःखी और दरिद्र व्यक्तियों से सहानुभूति, अन्याय से घृणा, छात्रों में असंतोष, धार्मिक महापुरुषों की जीवनी आदि से सामाजिक मूल्यों के विकास को बल दिया है। माध्यमिक शिक्षा आयोग के शब्दों में कक्षा कक्ष शिक्षा के आधार पर 'धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा' दी जानी चाहिए। कोठारी आयोग के अनुसार केन्द्रीय राज्य सरकारों को वे सब कदम उठाने चाहिए कि जिससे शिक्षा द्वारा आध्यात्मिक, सामाजिक मूल्य विकसित हो सकें। सभी धर्म के उत्तम मूल्यों को लेकर और कहानी माध्यम आदि से नैतिक शिक्षा देनी चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने भी महत्त्वपूर्ण सिफारिशों में 'मूल्य शिक्षा' ही थी जिसके द्वारा मानवीय मूल्यों एवं सामाजिक मूल्य विकसित किये जायें। 1970 के दशक में जहां महापुरुषों की जीवन चरित्रों, नैतिक कहानियों, देशभक्ति, वीरगाथाओं के साहित्य से शिक्षा प्रदान की जाती थी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1992) ने प्रजातांत्रिक एवं मानवतावादी धर्मनिरपेक्ष, वैज्ञानिक एवं समाजवादी मूल्यों को विद्यालय के लिए स्वीकृत की गई थी। आज के सूचना एवं संचार क्रांति के युग में जहां सच्ची शिक्षा की



Scanned by CamScanner

जगह हम लोग सूचना को मात्र ढूंढने की शिक्षा दे रहे हैं। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने ठीक ही लिखा है "हम बच्चों के मस्तिष्क में सूचनाएं उड़ेल रहे हैं और जीवन मूल्यों, अनुभवों तथा आध्यात्मिकता की अवहेलना कर रहे हैं।

उपरोक्त सामाजिक समरसता के विकास के लिए निम्न बिन्दुओं पर विशेष रूप से ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है-

1. पूरे देश में एक शिक्षा प्रणाली कार्यक्रम जिसमें 'नैतिकता एवं मूल्य शिक्षा' के पाठ्यक्रम समाहित हों।
2. बदलते परिवेश में 'वैज्ञानिक मूल्यों' (नये मूल्य) की स्थापना और सामाजिक संस्कृति और विभिन्नता में एकता के सूत्र विकसित करने वाले मूल्यों को विशेष रूप से ध्यान दिया जाये।
3. प्रशिक्षित कौशलपूर्ण शिक्षकों की पूर्ति के साथ ही शिक्षक का आदर्श मॉडल भी स्कूल एवं समाज में भी दृष्टिगत हो।
4. मूल्य शिक्षा के केवल सैद्धान्तिक ही नहीं व्यावहारिक पक्ष को भी शिक्षा में अनिवार्य रूप से शामिल किया जाये।
5. भारत जैसे देश के लिए विभिन्नता वाले भौगोलिक, सांस्कृतिक, धर्म, भाषा जाति के लोगों के लिए सर्वधर्म सभा वाली प्रार्थना हो।
6. प्रत्येक विषय में स्वतंत्रता, समता और भ्रातृत्व के तत्त्वों को विशेष उदाहरण से उद्धृत किया जाये।
7. सरकार की तरफ से इस ज्वलन्त विषय पर सेमीनार, कान्फ्रेन्स, कार्यशाला का आयोजन किया जाना चाहिए।
8. सामाजिक समरसता के विकास के लिए इस क्षेत्र में नये अनुसंधान पर बल देना चाहिए।
9. सभी कार्यस्थलों पर नैतिकता एवं मूल्यपरकता के भाव विकसित किये जाने चाहिए।

उपर्युक्त बिन्दुओं को स्थापित कर काफी हद तक सामाजिक समरसता का विकास किया जा सकता है। बी. एल. शर्मा ने ठीक ही कहा है कि "सकारात्मक सोच एवं दृढ़ इच्छाशक्ति के माध्यम से व्यक्ति समस्या का समाधान निकाल सकता है।"

**संदर्भ ग्रन्थ सूची -**


1. औदित्य, हिमांशु (2010) "शिक्षा और उदीयमान भारतीय समाज", आस्था प्रकाशन, जयपुर, पृ. 176-183
2. पण्ड्या, देवेन्द्र, "सर्वकालीन संदेश के प्रणेता : डॉ. अम्बेडकर", मासिक शिविरा पत्रिका, वर्ष 26, अंक 10, अप्रैल 2016, पृ. 10-11
3. मजेजी, बजरंग प्रसाद, "शिक्षक : सामाजिक समरसता के संवाहक", मासिक शिविरा पत्रिका, वर्ष 26, अंक 10, अप्रैल 2016, पृ. 11-12
4. यादव, वीरेन्द्र सिंह (2014), "भारतीय शिक्षा का बदलता परिदृश्य : चुनौतियां एवं समाधान की दिशाएँ", ओमेगा प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 392
5. राजोरा, सुरेश चन्द्र (2010), "समकालीन भारत की सामाजिक समस्याएं", राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृ. 292
6. शर्मा, के.एल. (2006), "भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन", रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ. 308
7. शर्मा, धर्मराज, "अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद : लोकतांत्रिक मूल्यों एवं मानव सभ्यता के लिए बड़ी चुनौती", रिसर्च रिइन्फोर्समेन्ट, खण्ड 6, अंक 1, मई 2018-अक्टूबर 2018, पृ. 69-73
8. सिंह, डी.के., पालीवाल, सौरभ एवं मिश्र, रोहित (2010), "मानव समाज संगठन एवं विघटन के मूल तत्त्व', न्यू रॉयल बुक कम्पनी, लखनऊ, पृ. 202



**शोधार्थी**
**शिक्षा विभाग**
**जैन विश्व भारती संस्थान**
**लाडनूं (राजस्थान)**

**सहायक आचार्य**
**शिक्षा विभाग**
**जैन विश्व भारती संस्थान**
**लाडनूं (राजस्थान)**




Scanned by CamScanner